Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 4 | ISSN : 2581- 6306

दक्षिण एशिया : विकास एवं सुरक्षा समस्याएँ

डॉ0 महेश पति त्रिपाठी
प्राचार्य, बाबू रामनरेश सिंह मेमोरियल डिग्री कॉलेज,
कोना–सोनबरसा, बरही, गोरखपुर (उ0प्र0)
सम्बद्ध–दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ0प्र0)

Article Info
Volume 3, Issue 4
Page Number : 110-116

Publication Issue :
July-August-2020

Article History
Accepted : 03 July 2020
Published : 10 July 2020

सारांश–दक्षिण एशिया की बात करते समय, मुख्यतः सात राज्यों वाले, छोटे सशस्त्र युद्धों व आतंकी–विद्रोही गतिविधियों से पीड़ित, दुनिया के सर्वाधिक जनसंख्या वाले व स्त्रातेजिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण ऐसे क्षेत्र का मानचित्र आँखों के सम्मुख घूम जाता है, जहाँ का प्रत्येक राज्य संघर्ष के किसी–न–किसी प्रकार से ग्रस्त है। 1947 से पूर्व यह क्षेत्र राजनीतिक व आर्थिक दृष्टि से एक बड़ी सीमा तक एक था। क्षेत्र में नेपाल व भूटान को छोड़कर पाँच राज्य अपनी स्वतन्त्रता से पहले अंग्रेजी उपनिवेश रहे हैं। दक्षिण एशिया में सुरक्षा एवं विकास की समस्त समस्याएँ मुख्यतः कथितं शाश्वत विरोधी देशों भारत–पाकिस्तान पर ही निर्भर करती है, इसीलिए 'दक्षिण एशिया के भविष्य का कार्य विवरण संघर्ष के उन कुंजी श्रोतों के इर्द–गिर्द होना चाहिए जो क्षेत्र के अनुभवों पर आधारित हो। दक्षिण एशिया हेतु यह विचारणीय विषय सूची दो स्तरों पर होनी चाहिए। एक भारत–पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय स्तर पर और दूसरा दक्षेस के क्षेत्रीय स्तर पर। विश्वास निर्माण हेतु तकनीकी मैकेनिज्म की निरन्तर वार्ताओं पर आधारित हमारा पूर्व काल इस हेतु कार्य क्षेत्र बनेगा और बाद में यह संस्थागत स्तर ग्रहण करेगा।[11] अतः दक्षिण एशिया में विकास व सुरक्षा विषयों पर मुख्य कार्य इन दोनों देशों को ही करना है। इसलिए महाशक्तियों को यहाँ से दूर देखते हुए द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय सहयोग के विस्तृत कार्यक्रम के साथ, पहले से निश्चित किए गए आर्थिक, सांस्कृतिक व सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास होना चाहिए ताकि वकौल खालिदा जिया का यह 'बँटा हुआ घर' अर्थात 'दक्षेस ' एक एकीकृत क्षेत्रीय इकाई के रूप में सुरक्षा एवं विकास के नव आयामों के साथ अन्तर्राष्ट्रीय जगत में अपनी अलग राजनीतिक पहचान बना सके।

मुख्य–शब्द – दक्षिण एशिया, विकास, सुरक्षा, समस्या।

दक्षिण एशिया की बात करते समय, मुख्यतः सात राज्यों वाले, छोटे सशस्त्र युद्धों व आतंकी–विद्रोही गतिविधियों से पीड़ित, दुनिया के सर्वाधिक जनसंख्या वाले व स्त्रातेजिक दृष्टि से

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

महत्त्वपूर्ण ऐसे क्षेत्र का मानचित्र आँखों के सम्मुख घूम जाता है, जहाँ का प्रत्येक राज्य संघर्ष के किसी–न–किसी प्रकार से ग्रस्त है। 1947 से पूर्व यह क्षेत्र राजनीतिक व आर्थिक दृष्टि से एक बड़ी सीमा तक एक था। क्षेत्र में नेपाल व भूटान को छोड़कर पाँच राज्य अपनी स्वतन्त्रता से पहले अंग्रेजी उपनिवेश रहे हैं। यद्यपि इलाके की सांस्कृतिक संरचना में विविधता के बावजूद बुनियादी एकता भी है और विविध संस्कृतियों के बाद भी ऐतिहासिक विकास में वे एक–दूसरे की पूरक रही है, किन्तु अंग्रेजी राज की समाप्ति के बाद नवस्वाधीन देशों ने अपने दरवाजे पड़ोसियों की ओर से बन्द कर लिये। वजह यह रही कि स्वतन्त्रता के साथ इन दक्षिण एशियाई राज्यों में उदित एक विशेष प्रकार के राष्ट्रवाद का प्रभाव भी दिखने लगा था, जो प्रत्येक राज्य में अलग प्रकार के आदर्श का प्रदर्शन करता दिखता था। यह राष्ट्रवाद अपने आक्रामक अन्दाज में कहीं पाश्चात्य जगत के विरुद्ध दिखता, कहीं पड़ोसी राष्ट्रों अथवा निश्चित देश के कुछ दूसरे समूहों के विरुद्ध दिखता था। फिर बाद में राष्ट्रवाद से प्रेरित यह आक्रामक संघर्ष क्षेत्र में स्वतन्त्रता के बाद से एक वास्तविकता बन गया था। सम्भवतः इसलिए ही कहा जाता है कि 'दक्षिण एशियाई क्षेत्र में यह संघर्ष केवल राज्यों के बीच ही नहीं था बल्कि यह लोगों के बीच भी है।"[1]

एक कटु सत्य दक्षिण एशियाई क्षेत्र के लिए यह भी है कि कोई भी सदस्य राष्ट्र न तो पूर्णतया राष्ट्र–राज्य की ओर क्रमिक रूप से विकसित हो पाया और नही राजनीतिक अखंडता को सफलतापूर्वक पा सका। लगभग दो सौ वर्षों के अंग्रेजी शासन ने विरासत के रूप में यहाँ एक सी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक समस्याएँ छोड़ी। भौगोलिक व आर्थिक दृष्टि से समन्वयकारी तत्त्व यद्यपि यहाँ मौजूद हैं, किन्तु फिर भी क्षेत्रीय देशों में सहयोग की अपेक्षा परस्पर अविश्वास की भावना अधिक है। यह स्पष्ट है कि "लोकप्रिय सहभागिता की कमी और स्थिर राजनीतिक मशीनरी की अनुपस्थिति जिससे क्या और कैसे जैसी असफलताएँ उत्पन्न होती हैं और जो जातीय समूहों के संघर्ष को जन्म देती है।'[2] अतः इस क्षेत्र का इतिहास संघर्षों का रहा है। वर्तमान में दक्षिण एशिया अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का केन्द्र बिन्दु बन चुका है। दक्षिण एशिया में भारत सबसे बड़ा देश है और इस क्षेत्र के सभी देश भारत के पड़ोसी हैं तथा लगभग सभी देशों की सीमाएँ भारत से मिली हैं। अतः सीमा संघर्ष भी एक क्षेत्र की मुख्य विशेषता रही है। इस सन्दर्भ में सी. आर. मिशेल का आकलन रहा है कि "1945 से पूर्व की अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था से जुड़े सभी अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष इसलिए हुए, क्योंकि सरकारें दूसरे राज्यों की सीमाओं से उत्पन्न संघर्षों में उलझी थीं।"[3] दक्षिण एशियाई देश भी इसके अपवाद नहीं रहे हैं। चीन द्वारा भारतीय सीमाओं पर अतिक्रमण तथा सीमा विवाद पर वार्ताएँ तो यहाँ की पहचान बन चुकी हैं, साथ ही पाकिस्तान से सरक्रीक व सियाचिन, श्रीलंका से निपटारित कच्छदीप टापू विवाद, बांग्लादेश के साथ मुहरी नदी सीमा विवाद, नवमूर द्वीप विवाद आदि छोटे–बड़े विवाद रहे हैं। सामान्यतः दक्षिण एशियाई देशों के छह दशकों के सम्बन्धों को मधुर होते हुए भी विवादग्रस्त माना जा सकता है। कश्मीर को लेकर भारत–पाक विवाद, जिसमें आतंकवाद रूपी छाया युद्ध के साथ परमाणु स्पर्धा का जुड़ना, तमिल प्रवासियों को लेकर भारत–श्रीलंका विवाद पहले, फरक्का विवाद फिर घुसपैठ व आतंकी कार्यों का नवकेन्द्र बने बांग्लादेश से भारत के विवाद, चीन द्वारा क्षेत्रीय देशों में घुसपैठ तथा दो दशक पूर्व अफगानिस्तान में सोवियत उपस्थिति के प्रत्युत्तर में पाकिस्तान को विशाल अमेरिकी शस्त्र – आपूर्ति और बाद में पाक–अफगान के सीमावर्ती क्षेत्रों का आतंकवाद का गढ़ बनना, दक्षिण एशिया की प्रमुख सुरक्षा समस्याएँ रही हैं। अतः इस क्षेत्र में पारस्परिक अविश्वास की भावना अधिक प्रबल है इसलिए ही क्षेत्रीय देशों में पारस्परिक सम्बन्ध द्विपक्षीय आधार पर संगठित हुए हैं न कि बहुपक्षीय आधार पर। अतः स्वाभाविक ही है कि यहाँ क्षेत्रीय

सहयोग का अपेक्षित विकास नहीं हुआ है। यद्यपि दो दशक पूर्व जन्मा 'दक्षेस ' इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम बन सकता था, किन्तु विश्व के अनेक क्षेत्रीय संगठनों के सदस्य देशों द्वारा आपसी विश्वास और तालमेल कायम करके प्रगति की दिशा में बढ़ाए कदमों से 'दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन' (दक्षेस) की तुलना करने पर निराशा हाथ लगती है।

जब दक्षेस का गठन हुआ था तभी तथा कमोवेश आज भी, इस इलाके में सहयोग द्वारा प्रगति की आशा बहुत कम लोगों ने ही की थी, क्योंकि यहाँ राजनीति की विवशताएँ – स्पर्धाएँ व क्षेत्र की पृथक पहचान का स्पष्ट संकट था, किन्तु फिर भी धीरे–धीरे वातावरण परिवर्तित हुआ और संघर्ष के बीच सहयोग के अंकुर भी फूटते रहे। 'सामान्यतः भौगोलिक समीपता तथा महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों से मिलकर प्रभावित होनेवाले सहयोग की ओर अग्रसित हो ही जाते हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि सहयोग, संघर्ष और मेलजोल मिलकर कार्य करने का एक 'वैध मापदंड' निर्धारित करते हैं।'[4] दक्षेस भी ऐसी ही कसौटी से गुजरता रहा और उसकी छोटी–छोटी उपलब्धियाँ भी सदस्य देशों की आन्तरिक व साझी समस्याओं के बीच नजर आती रही।

दक्षेस के संस्थापक राष्ट्र बांग्लादेश की स्थिति आज कोई अच्छी नहीं मानी जा सकती है। यहाँ दो प्रमुख राजनीतिक दलों की परस्पर विरोधी महिला नेताओं का टकराव जनतन्त्र की जड़ों को बुरी तरह कुचल चुका है। यहाँ कट्टरपंथी उग्रवादी, स्थानीय उग्रवाद के लिए वर्षों से उर्वर जमीन तैयार कर रहे हैं, जिस पर आतंकवाद की भरपूर फसल तैयार होकर पड़ोसी देशों की नियति बन गई है। भारत के उत्तर–पूर्वी राज्यों को नशीले पदार्थों तथा अवैध हथियारों की अबाध आपूर्ति यहीं से हो रही है। चीनी माल व हथियारों का विशाल डम्पिंग केन्द्र तो यहाँ है ही, उल्फा समेत सैकड़ों छोटे–बड़े आतंकवादी संगठनों की गतिविधियों का मुख्य संचालन भी यहीं से हो रहा है। तमाम सामरिक विशेषज्ञ बांग्लादेश को 'अगला अफगानिस्तान' घोषित कर चुके हैं।

श्रीलंका में कुछ समय से ठहरा हुआ जातीय गृहयुद्ध फिर उबाल पर आ रहा है। लिट्टे की बढ़ती गतिविधियों को दृष्टिगत कर श्रीलंका सरकार को दक्षेस का सम्मेलन स्थल तक बदलना पड़ा। नेपाल की स्थिति कुछ अलग नहीं है। राजा की सभी शक्तियाँ खत्म करने के बाद भी माओवादी हिंसा से प्रेरित चुनावी माहौल में जनतन्त्र का भविष्य भी उज्ज्वल नहीं दिखता। चीन द्वारा यहाँ इस बफर राज्य में बेहद दिलचस्पी लेना भारतीय सुरक्षा पर प्रश्नचिह्न जैसा ही है। भूटान तथा मालद्वीप यद्यपि एक सदस्य राष्ट्र के तौर पर दक्षेस की गतिविधियों का केन्द्र बिन्दु नहीं बन पाए हैं। किन्तु बड़ी शक्तियों की उनमें बढ़ती दिलचस्पी के कारण उनकी सुरक्षा के प्रति जागरूकता आवश्यक है। अब प्रश्न भारत–पाकिस्तान तथा नवागंतुक सदस्य अफगानिस्तान की दक्षेस में भूमिका के सन्दर्भ में है।

यद्यपि कुछ लोग भारत को दक्षिण एशिया की प्रधानशक्ति मानते हैं, पर यह पूर्णतः सत्य नहीं है, क्योंकि वह दक्षिण एशिया के दूसरे प्रमुख राष्ट्र से इतना अधिक शक्तिशाली नहीं हैं कि वह उसे अपनी इच्छानुकूल कार्य हेतु विवश कर सके और वह भारत का शाश्वत प्रतिद्वन्द्वी राष्ट्र भी है। यद्यपि वह दक्षेस का महत्त्वपूर्ण देश हो सकता है, किन्तु अब तक के काल में वह दक्षेस की सबसे बड़ी बाधा बनकर उभरा है। वहाँ के आतंकवाद को सीमापार भारत में प्रोत्साहित किया जा रहा है जो पाकिस्तानी शासन सेना व गुप्तचर सेवाओं का प्रमुख कार्य रहा है। दुनिया में उसकी छवि इस्लामी आतंकवादी देश के रूप में दृढ़ होती जा रही है। दक्षेस को उसने कश्मीर मसला उठाने का मंच बना रखा है। पिछले दक्षेस सम्मेलन में नए सदस्य अफगानिस्तान ने ही इस मामले में सन्देह की कोई गुंजाइश नहीं छोड़ी कि अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामी आतंकवाद को शह और शरण देने वाला पाकिस्तान ही है। यहाँ सैकड़ों इस्लामी आतंकवादी

संगठन सरकारी संरक्षण से खुलेआम गतिविधियाँ चला रहे हैं। तालिबान को जन्म देने, पोषण करने तथा अफगानिस्तान का नब्बे फीसदी भाग कब्जाने लायक बना देने में उसकी भूमिका किसी से छिपी नहीं है। अब पुनः हामिद करजई सरकार हेतु ताकतवर बनकर मुसीबत बन रहे तालिबान को पाकिस्तानी अन्दरखाने की मदद व मिलीभगत स्पष्ट है। इस क्षेत्र से आतंकवादी, नशीले पदार्थों और अवैध शस्त्रों का दक्षिण एशिया में स्थित सभी आतंकी – उपद्रवी – नक्सली संगठनों को निर्यात किया जा रहा है। अफीम तथा दूसरे नशीले पदार्थों का अफगानिस्तान में उत्पादन होता है जिन्हें पाकिस्तानी जनजातीय क्षेत्रों में स्थित प्रयोगशालाओं में परिशुद्ध किया जाता है। यहाँ दो सौ से अधिक गतिशील हेरोइन प्रयोगशालाएँ हैं जो अफगानिस्तान के ड्रग उद्योग की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।[5] यहाँ क्षेत्र में शीतयुद्ध के दौरान महाशक्तियों द्वारा छोड़े गए हथियारों की प्रबल उपस्थिति भी चिन्ताजनक रही है। अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप के बाद अपनी पराजय महसूस कर रहे अमेरिका ने निश्चय किया कि वह यहाँ वियतनाम की तरह प्रत्यक्ष हस्तक्षेप वाली गलती नहीं करेगा। अतः इस कार्य हेतु उसने पाकिस्तान को इस एवज में प्रयोग किया। इसके बाद तो अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप (1979) के बाद क्षेत्र में शस्त्रों की बाढ़ आ गई।[6] स्वाभाविक है क्षेत्रीय सुरक्षा सन्तुलन इससे गड़बड़ा गया। पाकिस्तान ने इसी दौरान अर्थात नब्बे के दशक में अपनी कश्मीर नीति को छाया युद्ध अर्थात आतंकवाद की ओर मोड़ दिया। इस समय लगभग 200 आतंकी समूह कश्मीर में हिंसक कार्यों में लिप्त थे और वे परस्पर दृढ़ सम्पर्क द्वारा हिंसा के विभिन्न पहलुओं से परिचालित हो रहे थे।[7] आतंकवाद के उस दौर में, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के अनुसार, 1990 के दशक में कश्मीर संघर्ष में 1416 सुरक्षा सैनिकों के साथ सत्रह हजार से अधिक लोग मारे गए और 15 बड़े नेताओं के साथ करीब 125 राजनीतिज्ञ इस पाक आतंकवाद के शिकार हुए।[8] कारगिल संघर्ष के बाद भी करीब तीन से चार हजार पाकिस्तानी अनियमित सेना के जवान कश्मीर में मौजूद थे।[9] अमेरिकी भूराजनीतिक विश्लेषण संस्थान 'स्ट्राटेजिक फोरकास्टिंग' ने भी माना है कि पाकिस्तानी सैन्य एजेंसियाँ आतंकवाद को प्रोत्साहन देने का गुप्त अभियान चलाती हैं।[10] ऐसे इस्लामी जेहादियों द्वारा अन्दर–बाहर के विरोधियों के विरुद्ध हिंसक कार्यवाहियों द्वारा अपनी सत्ता के सबलीकरण का प्रयास प्रायः सभी पार्क हुक्मरानों ने किया है। राष्ट्रपति मुशर्रफ का पहले लोकतान्त्रिक संस्थाओं का अपदस्थीकरण, फिर आतंकवाद के विरुद्ध दिखाने का युद्ध व न्यायपालिका के साथ टकराव को इसी दृष्टि से देखा जाना चाहिए। पाकिस्तान की रक्तरंजित चुनाव प्रक्रिया जिसमें हजारों निर्दोषों के साथ पूर्व प्रधानमन्त्री बेनजीर भुट्टो भी काल कवलित हुई और नवाज – जरदारी की नई मिली–जुली सरकार के आने की सम्भावना भी वहाँ सुखद जनतन्त्र का संकेत नहीं देती और अन्ततोगत्वा दक्षेस के भविष्य की सफलता पर प्रश्नचिह्न लगाती है। दक्षेस के नवागंतुक सदस्य अफगानिस्तान के एक दशक पूर्व के हालात से सारी दुनिया परिचित है। सभी मामलों में पश्चिमी सहायता पर पूर्णतः आश्रित इस देश में कट्टरपन्थ की जमीन को लोकतन्त्र की फसल के लिए उर्वर बनाने के प्रयास चल रहे हैं। अब पुनः तालिबान का सबल होकर दूर–दराज के क्षेत्रों में नियन्त्रण स्थापित करना भी क्षेत्रीय शान्ति, सुरक्षा और विकास हेतु घातक है और यह दक्षेस के उद्देश्य को असफल बना सकता है।

इस प्रकार क्षेत्र में केवल भारत ही ऐसा देश है जहाँ अभूतपूर्व राजनीतिक एकता दिखाई देती है। वैसे यहाँ भी आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय और ग्रामीण विकास स्वतन्त्रता पूर्व से ही चुनौतीपूर्ण समस्या रहा है। जातिवाद, क्षेत्रवाद व सम्प्रदायवाद यहाँ की पहचान है और सार्वजनिक जीवन में भाई–भतीजावाद, पक्षपात, भ्रष्टाचार आदि अपवाद न रह कर सामान्य नियम बन गया है। महँगाई और

मुद्रास्फीति के कारण आर्थिक प्रगति की गति धीमी पड़ रही है। जिससे सामान्य जन की व्यवस्था से मोहभंग हो रहा है। पड़ोसी चीन और दक्षेस देशों के साथ भारत के तमाम सुलझे अनसुलझे संवेदनशील व सुरक्षा सम्बन्धी मुद्दे हैं फिर भी दक्षेस के मामले में वर्तमान भारतीय पहल की सोच के पीछे उसकी समझदारी और आत्मविश्वास नजर आता है, जिसमें धरातलीय वास्तविकता के साथ बदलते वैश्विक घटनाक्रम का असर भी दिखाई पड़ता है। एक लम्बे अर्से के बाद भारत पड़ोस के साथ सहयोग को उद्धत दिखता है। यह आवश्यक भी है कि यदि वह अपनी जिम्मेदारी से पीछे हटा तो चीन आएगा। भारत के पड़ोसी को भी साझेदारी का फायदा समझ में आना चाहिए। क्योंकि उनके विकास के रास्ते भी अधर से ही गुजरते हैं। यद्यपि सभी पड़ोसी भारत के महत्त्व को समझते हैं, पर प्रायः सभी पड़ोसियों ने किसी–न–किसी मौके पर भारत से बेरुखी. का इजहार किया है। अतः आवश्यकता है उनके सन्देह को दूर करने की। इलाके की भौगोलिक संरचना ही ऐसी है कि सभी दक्षेस देशों को भारत जोड़ता है। अफगानिस्तान के दक्षेस में शामिल होने के बाद पहली बार ऐसा हुआ है कि किसी दक्षेस देश की सीमा भारत से नहीं मिली। इस प्रकार पाकिस्तान व अफगानिस्तान ही ऐसे देश है जो भारत के रास्ते एक दूसरे से नहीं जुड़े हैं।

भारत इस क्षेत्र की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है और वह इसके अनुरूप कार्य भी कर रहा है। उसने पाँच देशों के लिए न केवल बाजार खोलने की घोषणा की अपितु 'सार्क विश्वविद्यालय' खोलने तथा खाद्यकोष बनाने का भी प्रस्ताव अपनी ओर से किया है। श्रीलंका के साथ उसका फ्री ट्रेड समझौता पहले से ही है। आसियान देशों में थाईलैंड के साथ भी उसका ऐसा ही समझौता है और चीन के साथ इस प्रक्रिया की शुरुआत हो रही है। बस पाकिस्तान ही रह जाता है, क्योंकि औपचारिक बातें जो भी हो, मुख्य बात कश्मीर और आपसी प्रतिद्वन्द्विता ही है और उसका समाधान इतना आसान नहीं। यद्यपि क्षेत्र में राजनीतिक स्थिरता बनाए रखने में भारत की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। मालदीव में भारत द्वारा की गई कार्यवाही को सबने सराहा। श्रीलंका में भारतीय शान्ति सेना का अनुभव अच्छा नहीं रहा, पर इससे भारत का महत्त्व कम नहीं हो पाता। हिन्द महासागर के जलमार्गों को निर्विघ्न बनाए रखने में भारतीय भूमिका स्पष्ट है। इसी महत्त्व के कारण कुछ लोग भारत को क्षेत्रीय दादा साबित करना चाहते हैं, पर इसका विकल्प भारत का कमजोर होना नहीं है। भारत यदि कमजोर व अस्थिर होगा तो दक्षिण एशिया भी इससे गहरी अस्थिरता का शिकार होगा। यह बात सभी दक्षेस देशों विशेषकर पाकिस्तानी नेतृत्व को समझनी होगी साथ ही भारत को अपनी केन्द्रीय स्थिति को दृष्टिगत कर यह समझना होगा कि परिधीय क्षेत्र अस्थिर होगा तो केन्द्रीय धुरी भी कमजोर होगी। पाक–अफगान में आतंक भरी अशान्ति तथा नेपाल–श्रीलंका–बांग्लादेश में अस्थिर वातावरण का असर भारत पर पड़ता है। हम यदि क्षेत्र में विकास के द्वार खोलना चाहते हैं तो क्षेत्र की अस्थिरता (विशेषकर पाकिस्तान–अफगानिस्तान की) हमारे लिए भी नुकसानदेह है इसलिए पाकिस्तान से लेकर अफगानिस्तान तक आधुनिक जन समाज की स्थापना होनी ही चाहिए और भारत को इसके लिए अपनी सीमा से बाहर जाकर भी प्रयास करने चाहिए। यद्यपि भारत तथा दक्षिण एशिया में बुद्धिजीवियों के एक हिस्से को कथित दादागिरी का यह भारतीय प्रयास रास नहीं आएगा, जो इस क्षेत्र को भारतीय उपमहाद्वीप था इंडियन सब– कांटिनेंट भी कहा जाना पसन्द नहीं करते। इस क्षेत्र को मात्र दक्षिण एशिया मानकर भारत की महत्ता के विरोध में संकल्पनाएँ प्रस्तुत करने वाले विद्वान भूल जाते हैं कि दक्षेस की संकल्पना व पहल बांग्लादेश के पूर्व राष्ट्रपति जियाउर्रहमान की थी। यद्यपि यह भी सत्य है कि यहाँ (दक्षेस के देशों में) सभी लोग भारत विरोधी नहीं हैं। विकास को दृ ष्टिगत रखते हुए दोनों पक्षों में संयम बरता जाने लगा है।

पाकिस्तानी आम चुनावों के बाद पाकिस्तान पीपुल्स पार्टी के सहअध्यक्ष जरदारी साहब कश्मीर मसला अगली पीढ़ी के लिए छोड़ने की बात कहने लगे। विकास के मद्देनजर एक ईरान– पाक–भारत पाइप लाइन परियोजना पर बात हो रही है। एक सम्भावना तुर्कमेनिस्तान–अफगानिस्तान–भारत पाइप लाइन की भी है। एशियन विकास बैंक की मदद से मल्टी मोडल ट्रांसपोर्ट प्रणाली के विकास की सम्भावना के साथ रेल, सड़क वायु तथा जलमार्ग से परिवहन की कुछ बड़ी परियोजनाएँ अगले कुछ वर्षों में साकार हो सकती है। स्वाभाविक है दक्षेस की इन परियोजनाओं में भारत की महत्त्वपूर्ण भूमिका है साथ ही, यूरोप से पूर्वी और दक्षिण पूर्वी एशिया को जोड़ने में दक्षेस व भारत की भूमिका रेखांकित की जा सकती है। इसलिए ही, चीन, अमेरिका, जापान, दक्षिण कोरिया समेत यूरोपियन यूनियन की दिलचस्पी अब दक्षेस में बढ़ी है और ये लोग दक्षेस के सम्मेलनों में पर्यवेक्षण की स्थिति से हिस्सा भी लेने लगे हैं। यद्यपि कतिपय क्षेत्रों में यह भी आशंका व्यक्त की जाने लगी है कि चीन व अमेरिका की मौजूदगी तथा भविष्य के शिखर सम्मेलनों में पर्यवेक्षक रूप में ही सही भाग लेनेवालों की संख्या बढ़ती रही तो न केवल दक्षेस की दक्षिण एशियाई पहचान धुँधलाएगी अपितु इस संगठन में भारत की स्थिति का भी अवमूल्यन होगा और नई समस्याएँ उत्पन्न होंगी। वैसे यह मुख्यतः भारत पर निर्भर करता है कि वह कैसे चीन–अमेरिका जैसी दो बड़ी विश्वस्तरीय शक्तियों के साथ क्षेत्रीय सहकार की रूपरेखा सार्थक ढंग से तैयार कर पाता है।

दक्षिण एशिया में सुरक्षा एवं विकास की समस्त समस्याएँ मुख्यतः कथितं शाश्वत विरोधी देशों भारत–पाकिस्तान पर ही निर्भर करती है, इसीलिए 'दक्षिण एशिया के भविष्य का कार्य विवरण संघर्ष के उन कुंजी श्रोतों के इर्द–गिर्द होना चाहिए जो क्षेत्र के अनुभवों पर आधारित हो। दक्षिण एशिया हेतु यह विचारणीय विषय सूची दो स्तरों पर होनी चाहिए। एक भारत–पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय स्तर पर और दूसरा दक्षेस के क्षेत्रीय स्तर पर। विश्वास निर्माण हेतु तकनीकी मैकेनिज्म की निरन्तर वार्ताओं पर आधारित हमारा पूर्व काल इस हेतु कार्य क्षेत्र बनेगा और बाद में यह संस्थागत स्तर ग्रहण करेगा।[11] अतः दक्षिण एशिया में विकास व सुरक्षा विषयों पर मुख्य कार्य इन दोनों देशों को ही करना है। इसलिए महाशक्तियों को यहाँ से दूर देखते हुए द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय सहयोग के विस्तृत कार्यक्रम के साथ, पहले से निश्चित किए गए आर्थिक, सांस्कृतिक व सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास होना चाहिए ताकि वकौल खालिदा जिया का यह 'बँटा हुआ घर' अर्थात 'दक्षेस ' एक एकीकृत क्षेत्रीय इकाई के रूप में सुरक्षा एवं विकास के नव आयामों के साथ अन्तर्राष्ट्रीय जगत में अपनी अलग राजनीतिक पहचान बना सके।

सन्दर्भ एवं पाद टिप्पणियाँ

1. Myron Weigner, 'Critical Choice for India and America' in Donald C. Hellman (ed.), South Asia : The Politics of Poverty and Peace (Massachussets : Lexington Books, 1976), P. 28.
2. Rasul B. Rais, 'South Asia and the Global System : Continuity and Change' in External Compulsion of South Asian Politics (New Delhi: Sage Publica- tion 1993) P. 22.
3. Shelton U. Kodikara (ed.), 'External Compulsion of South Asian Politics', (New Delhi : Sage Publication, 1993) P. 15.
4. Mohammad Ayoob, "The Third World Security Predicament: State Making, Regional Conflict and the International System Colorado' (Lynne Reiner. Publisher, 1995) P. 56.
5. UNDCP, Chemical control in fight against illicit drug Production : The South and South West Asian Scene, May 1998P. 49-50.

6. S. D. Muni, 'Geo-Strategic Implication of SAARC' in the Sridhar K. Khatri (ed.), Regional Security in South Asia (Kathmandu : Centre for Nepal and Asian Studies, Tribhuvan Uni. 1987).
7. Tara Kartha, 'Non Conventional Threat to Security', Strategic Analysis, May 1997, P. 293.
8. Hindustan Times, July 15, 1999.
9. Prem Shankar Jha] 'Subversion in Kashmir' Hindustan Times] July 16, 1999.
10ण दिलीप अग्निहोत्री, 'दक्षेस देश और उनमें पनपता आतंकवाद,' 'राष्ट्रीय सुरक्षा की समसामयिक समस्याएँ –स. ए. पी. शुक्ल एवं राहुल मिश्र (राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली 2006) पृष्ठ 201
11. Shree Kant Paranjpe, 'An EÛploration intoApproaches for Conflict Management in SouthAsia' in Deepankar Banerjee & Gert W. Kueck (Ed), South Asia And the War on Terrorism (India Research Press, New Delhi) P. 196&197-